International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 29-10-2021, Accepted: 10-11-2021, Published: 30-11-2021
Volume 7, Issue 6, 2021, Page No. 113-115

संत एवं सूफ़ी काव्यधारा में असमानता

ज्योत्स्ना आनंद
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध–आलेख का ध्येय मध्यकालीन हिंदी साहित्य की संत एवं सूफ़ी काव्यधारा के मध्य एकता के संबंध–सूत्र की प्रगतिशील खोज है। भक्ति संत काव्यधारा का सामजिक प्रदेय एवं सूफ़ी दर्शन की वर्तमान प्रासंगिकता के बहुआयामी विवेचन को प्रस्तुत करना ही शोध–आलेख का मुख्य आधार रहा है।

मूल शब्दः संत, सूफ़ी, प्रदेय, ईश्वर, प्रेम, भक्ति, संस्कृति

प्रस्तावना

संत एवं सूफ़ी मत, दोनों की साधना में ब्रह्म के निगुर्ण रूप को महत्त्व दिया गया परंतु संतों ने ब्रह्म प्राप्ति के लिए ज्ञान को आधार बनाया। यही कारण है कि संतों का काव्य ज्ञानाश्रयी कहलाया। दूसरी ओर "रहस्यवादी चिंतन और प्रेमार्चन वाली इस्लामी पद्धति को 'तासव्वुफ़' दर्शन अथवा सूफ़ीमत कहा गया।" सूफ़ियों ने ईश्वर को प्रेम के माध्यम से प्राप्य माना और इसके लिए प्रेम कथाओं की रचना की।आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार सूफ़ी कवियों ने–"प्रेमगाथाओं के रूप में उस प्रेमतत्व का वर्णन किया है जो ईश्वर को मिलानेवाला है।" अतः सूफ़ियों का काव्य प्रेमाश्रयी कहलाया। भले ही संत एवं सूफ़ी एक ही वातावरण में पनप रहे थे और समान स्रोतों से प्रेरणा भी ग्रहण कर रहे थे परंतु फिर भी दोनों ने अपनी कतिपय मौलिक मान्यताओं को बनाए रखा। दोनों की उत्पत्ति के मूल एवं सिद्धांतों में अंतर होने के कारण उनमें वैषम्य भी बना रहा। चूँकि सूफ़ी विदेशी परंपरा से संबंधित है और संत लोग मूलतः भारतीय है अतः संतों एवं सूफ़ियों में कतिपय समानताएं होने के बावजूद असमानताएँ भी परिलक्षित होती हैं । अन्य विद्वानों के अनुसार–"सूफ़ी अंतर्दृष्टि से ह्रदय में ईश्वरीय प्रकाश का अभेद रूप से साक्षात्कार करते हैं।"

भारतीय सैद्धांतिक परंपरा के अनुसार परमात्मा को पुरुष माना जाता है और सभी साधक स्त्री रूप माने जाते हैं। संतों की साधना विशुद्ध भारतीय है। यही कारण है कि इन्होंने परमात्मा को पति और आत्मा को पत्नी के रूप में माना है।

'हरि मेरा पीव मैं हरि की बहुरिया'

दूसरी ओर सूफ़ियों की साधना में परमात्मा को स्त्री रूप में व्यक्त किया गया है और साधक पुरुष रूप माने जाते हैं। भारतीय सूफ़ी कवि भी फ़ारसी साहित्य को अपना प्रेरणा स्रोत मानते थे। यही कारण है कि उनके समस्त काव्य में नायिका को परमात्मा का प्रतीक और नायक को साधक माना गया है अर्थात् आत्मा को प्रियतम और परमात्मा को प्रियतमा माना गया है। संतों ने मिलन की उत्सुकता आत्मा रूपी पत्नी में दिखाई है – 'कबहुँ मिलोगी राजा राम गुसाईं।' इसके विपरीत सूफ़ियों ने यह उत्कंठा आत्मा रूपी पति में दिखाई है। संतों के प्रेम का मूल स्रोत भारतीय है जबकि सूफ़ियों का इस दिशा में प्रेरणा स्रोत फ़ारसी साहित्य है।

यद्यपि सूफ़ी और संतों दोनों का ही उद्देश्य हिंदू–मुस्लिम एकता स्थापित करना था तथापि संतों ने इसके लिए धार्मिक एकता पर बल दिया। वे सामाजिक उत्थान के लिए उनमें एकता चाहते थे। हिंदू व मुसलमानों में एकता स्थापित करने के लिए एक सामान्य भक्ति मार्ग की प्रतिष्ठा करना चाहते थे। इस भेद के निवारण के लिए ही इनके स्वर में प्रखरता और कटुता का समावेश हुआ –

'अरे इन दोउन राह न पाई।
हिन्दुअन की हिन्दुआई देखी, तुरकन की तुरकाई।।'

इनका मानना था कि शरीर के विभिन्न अंग परस्पर अलगाव की भावना रखकर निर्वाह नहीं कर सकते है। यही स्थिति हिंदू और मुसलमानों की है –

'दोनों भाई हाथ पग, दोनों भाई कान। दोनों भाई नैन हैं, हिन्दू मुसलमान।

सूफ़ियों का उद्देश्य भी हिंदू और मुसलमान में एकता स्थापित करना था परंतु वे इस उद्देश्य की प्राप्ति सांस्कृतिक एकता
द्वारा करना चाहते थे। यही कारण है कि सूफ़ी होते हुए, सूफ़ी सिद्धांतों के प्रतिपादन के लिए इन्होंने हिंदुओं की प्रेम कथाओं को आधार बनाकर उन्हीं की भाषा में, वैसे ही सामाजिक परिवेश में इन्होंने काव्य रचना की।

'माता के रक्त पिता के बिन्दू उपने दुवौ तुरक और हिन्दू।'

और कदाचित् इस दिशा में सूफ़ी अधिक सफल रहे।
संतों ने सामाजिक सुधारों व धार्मिक एकता के लिए खंडनात्मकता के प्रखर शस्त्र का प्रयोग किया था। उन्होंने सामाजिक विकृतियों पर कठोर प्रहार किए। हिंदू और मुसलमानों के विभिन्न बाह्याचारों, रीति–रिवाजों पर भी कटु प्रहार किए। नाना संप्रदायों आदि का भी विरोध किया। यही कारण है कि अनेक संप्रदाय हिंदू और मुसलमान उन्हें नापसंद भी करने लगे। संतों ने हिंदुओं और मुसलमानों दोनों का विरोध किया –

तू ब्राह्मण हौ काशी का जुलाहा चीन्ह न मोर गियाना।
ते जो बामन बामनी जाया और राह ह्वै क्यों नहीं आया।

मुसलमानों की हिंसा वृत्ति पर प्रहार करते हुए वे कहते हैं –

बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ी खाल।
जे जन बकरी खात हैं, तिन को कौन हवाल।।

दूसरी ओर सूफ़ियों ने किसी संप्रदाय विशेष, जाति–विशेष आदि का खंडन नहीं किया। न ही उनके समस्त साहित्य में खंडनात्मक स्वर हैं वरन् उन्होंने हिंदू घरों की प्रेम कहानियों द्वारा प्रेम की विश्वसनीयता का प्रतिपादन किया है।

संतों ने अपने भावों की अभिव्यक्ति मुक्तक काव्य के रूप में की है। उनकी काव्य रचना में पूर्वापर क्रम का अभाव है। यही कारण है कि उनके काव्यों में दोहे व भजन मिलते हैं। चूँकि संत अक्षर ज्ञान से शून्य अथवा कम पढ़े–लिखे थे अतः इन्होंने अपने वचनों को नहीं लिखा। बाद में उनके शिष्यों ने उन्हें लेखनीबद्ध कर काव्य का रूप दिया। दूसरी ओर सूफ़ियों ने प्रबंध काव्यों के द्वारा भावाभिव्यक्ति की है। लगभग सभी सूफ़ी काव्य जैसे पद्मावत, मधुमालती, चित्रावली आदि प्रबंध काव्य हैं। कहीं–कहीं इन्होंने मुक्त शैली का भी प्रयोग किया है।
संत मूलतः घुमक्कड़ प्रवृत्ति के थे। ये भिन्न–भिन्न प्रांतों में घूमते रहते थे और जनसाधारण की भाषा में अपने विचारों को
अभिव्यक्त करते थे। यही कारण है कि इनकी भाषा में लोक प्रचलित शब्दों का बाहुल्य है। इनकी भाषा सामान्य जन की भाषा है। अतः इनके काव्य में तद्भव व देशज शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है –

माटी कहै कुम्हार सों तू क्यों रुँधू मोहि।
एक दिन ऐसा होइगा मैं रुँधूगी तोहि।।

जबकि सूफ़ियों की भाषा अपेक्षाकृत व्यवस्थित है। इनकी भाषा लोक प्रचलित अवधी है। यद्यपि सूफ़ियों की अवधी में तुलसी की सी साहित्यिकता व पांडित्य नहीं है तथापि उनकी भाषा प्रसाद एवं माधुर्य गुण से परिपूर्ण है। उसमान जैसे सूफ़ी कवियों पर भोजपुरी का भी प्रभाव है। नूर मुहम्मद ने कहीं–कहीं ब्रजभाषा के शब्दों का भी प्रयोग किया है। इनके काव्य में अरबी और फ़ारसी शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।
संतों एवं सूफ़ियों दोनों का ईश्वर निराकार है। संतों ने उसे ज्ञान व प्रेम से लभ्य माना है। संत काव्य में ज्ञान प्रधान है और प्रेम गौण। संत वेद–पुराणों के ज्ञान की अपेक्षा सहज ज्ञान को अधिक महत्त्व देते थे –

क्या पढ़िये क्या गुनिये, क्या वेद पुराण सुनिये। पढ़े सुने क्या होई, जो सहज न मिल्यो सोई।।

जबकि सूफ़ियों ने ईश्वर को प्रेमगम्य माना है। इन्होंने भी ज्ञान को महत्त्व दिया है परंतु गौण रूप में। संतों ने कर्मकाण्ड की उपेक्षा की है जबकि सूफ़ी कर्मकाण्ड में विश्वास रखते है। सूफ़ियों ने प्रेम को ज्ञान से अधिक महत्त्व दिया। यही कारण है कि इन्होंने प्रेमकथाओं को आश्रय लिया और अपने काव्यों में प्रेम की ही चर्चा सर्वाधिक की। इनके लिए प्रेम ही ईश्वर प्राप्ति का एकमात्र साधन है। प्रेम का महत्त्व बताते हुए जायसी कहते हैं –

ज्ञान दिष्टि सौं जाइ पहूँचा। पेम अदिष्ट गगन ते ऊँचा। धुव ते ऊँच पेम धुव ऊआ। सिर देह पाँव देइ सो छुआ।।

संत काव्य में अंतः साधना पर बल दिया गया है। इनका निर्गुण ब्रह्म घट–घट वासी है। इनके मतानुसार ईश्वर सत्य है और जगत मिथ्या है। यही कारण है कि इन्होंने प्रकृति को उदासीन दृष्टि से देखा है। इसके विपरीत सूफ़ियों का प्रेमस्वरूप ईश्वर प्रकृति के कण–कण में व्याप्त है। यही कारण है कि प्रकृति उनके लिए स्पृहणीय है। इन्हें 'रवि ससि नखत उसकी दीप्ति' से दीपित दिखाई पड़ते हैं।
संतों पर सिद्धों और नाथों का स्पष्ट प्रभाव है। उनसे प्रभावित होकर ही उन्होंने उलटवासियों का प्रयोग किया है। जबकि सूफियों के काव्य में कहीं भी उलटवासियाँ नहीं है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः चूँकि संत और सूफ़ी दोनों ही निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक थे और समान राजनैतिक, सामाजिक व सांस्कृ तिक परिस्थितियों में विकसित हुए थे। साथ ही दोनों का उद्देश्य भी हिंदू–मुसलमानों में एकता स्थापित करके समाज का परिष्कार करना था। अतः इन दृष्टियों से उनमें समानताएँ थीं। वहीं दूसरी ओर चूँकि संतों में ज्ञान की प्रधानता थी और सूफ़ियों में प्रेम की, संत मूलतः भारतीय थे जबकि सूफी मूलतः मुसलमान थे अतः उनमें असमानताएँ होना भी स्वाभाविक है। निःसंदेह दोनों का ही निर्गुण भक्ति काव्य में अक्षुण्ण महत्त्व है। समाज पर

सूफ़ियों का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक पड़ा क्योंकि संतों की वाणी में विरोधात्मक स्वर प्रखर थे।

संदर्भ सूची

1. हिंदी साहित्येतिहास की भूमिका (भाग–2): प्रो. (डॉ.) सूर्यप्रसाद दीक्षित, संस्करणः 2008, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ. 84
2. हिंदी साहित्य का इतिहासः आचार्य रामचंद्र शुक्ल, संस्करणः 2015, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ. 62
3. चित्रावलीः डॉ. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, संस्करणः 1986, रीगल बुक डिपो, दिल्ली, पृष्ठ.31